International Journal of Engineering Research & Management Technology
ISSN: 2348-4039
July-August-2018 Volume 5, Issue-4
Email: editor@ijermt.org www.ijermt.org

शेखावाटी के सगुण भक्ति साहित्य में भक्ति धारा का प्रारम्भ

डॉ. मन्जुलता सैनी
सहायक आचार्य – हिन्दी साहित्य
श्री कृष्ण संत्सग बालिका महाविद्यालय,
सीकर (राज.)

शेखावाटी भक्ति साहित्य में सगुण और निर्गुण दोनो धाराओं के अन्तर्गत काफी साहित्य की रचना हुई है तथा कई प्रसिद्ध भक्ति में क्षेत्र में अपना महत्वपूर्ण योगदान की दिया है अग्रदास, सुन्दरदास जैसे भक्त कवियों में तो भारतीय सन्त परम्परा अपना एक विषिष्ट स्थान भी बनाया है। शेखावाटी का प्रवेष और यहां की भक्ति भावनाओं से परिपूर्ण धर्मप्रण जनता ने भक्ति कवियों को गहरा भाव–सम्मान भी प्रधान किया है यहाँ एक तरफ राम कृष्ण शक्ति षिव आदि सगुण भक्त कवियों पर भक्ति परक सार मिलता है तो दूसरी और निर्गुण सन्तों में दादू पंथी ओर नाथ पंथी भक्त कवियों का भी साहित्य उपलब्ध होता है। शेखावाटी में सगुण भक्ति धारा का आर्विभाव मुख्य रूप से 16 षताब्दी में दिखाई देता है।[1]

सगुण भक्ति धारा का प्रारम्भ

राजस्थान में पाये जाने वाले विविध धार्मिक सम्प्रदायों का शेखावाटी के सन्त कवियों पर भी प्रभाव पड़ा और यहाँ सगुण धारा के भी अनेक कवियों ने भक्ति परक काव्य लिखकर भक्ति के क्षेत्र में अमूल्य ग्रन्थों की रचना की शेखावाटी में जैसा की हमनें उल्लेख किया, दोनों ही धाराओं के भक्त साहित्य की न केवल महत्वपूर्ण सेवा की अपितु अपनी भक्ति भावना से भक्ति को विस्तार भी दिया।

प्रायः ऐसा माना जाता है कि जब भक्त धैर्य और श्रद्धा भाव से भगवान की भक्ति करने में तल्लीन हो जाता है उस समय उसके मन में भक्ति का उदय माना जाता है। साधना के तीन अवयव कर्म, ज्ञान और भक्ति कहे गए है।[2]

भक्ति से निसृत श्रद्धा ओर प्रेम ही भक्ति का मुख्य आधार माना गया है। श्रद्धा और सम्पूज्य बुद्धि में धर्मतत्व का समावेष होता है। और इसी धर्म तत्व के प्रधानता के कारण सगुण भक्ति का श्रोत प्रवाहित होता है। भक्तों के भगवान ज्ञान स्वरूप और प्रेम स्वरूप और धर्म स्वरूप है।[3] आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने लिखा है कि ''ईष्वर के धर्म स्वरूप को लेकर जिसकी रमणीय अभिव्यक्ति ओर की रक्षा और रंजन में होती है। प्राचीन वैष्णव भक्ति की राम भक्ति शाखा उठी, कृष्ण भक्ति शाखा केवल प्रेम स्वरूप को लेकर ही नई उमंग से फैली।[4]

धर्म की भावनात्मक अनुभूति के कारण भक्ति भावना जब हिलोरें मारने लगती है तो भक्त के मन में भगवान के प्रति श्रद्धा का शैलाब उमड़ने लगता है और भक्त अपनी प्रगाढ़ भावना से उस परमात्म–तत्त्व को प्राप्त करने की कोषिष करता है। भगवान भक्त की इसी श्रद्धा भाव का भूखा है। वह उसकी हर पुकार को अपने भक्त की पुकार मानकर न केवल सुनता

है अपितु वह हर क्षण उसकी रक्षा के लिये तैयार भी रहता है। भक्ति का आकार भक्त का अपना होता है। यही भक्ति भावना उसे उस पथ पर ले जाती है जिसके लिये वह जन्म–जन्मान्तर की चाह संचित रखता है।

सगुण भक्ति ईष्वर के सगुण रूप, अवतार भावना, लीला रहस्य, रूपोपासना जाति भेद की अमान्यता और गुरु की महता आदि को मानकर के चलती है।[5]

(क) भक्ति सम्प्रदाय की स्थापना

शेखावाटी धार्मिक गतिविधियों का महत्वपूर्ण क्षेत्र रही है तथा प्रसिद्ध सन्त महात्माओं की लीला भूमि भी रही है। यहां भक्ति परक साहित्य की सर्वाधिक रचना हुई है इसमें सगुण और निर्गुण दोनों धाराओं के सन्त कवि हुए है तथा उन्होंने अपनी भक्ति के अन्तर्गत साहित्य की रचना की है इसलिए शेखावाटी में सगुण और निर्गुण भक्ति साहित्य महत्वपूर्ण है। इस धाराओं में अग्रदास, नाभादास, रूस्तमजी, सुन्दरदास भीखजन जैसे विषिष्ट कवि हुए हैं।

1. सीता–राम भक्ति शाखा

शेखावाटी एक धर्म, प्राण, जनपद रहा है। यहां प्राचीनकाल से ही विविध प्रकार के धर्मों, मतों एवं सम्प्रदायों का प्रचार–प्रसार रहा है। धर्म वस्तुतः मानवीय आदर्ष को प्रस्तुत करने का एक माध्यम है और इस धार्मिक भावना के कारण जो उदारता व सहिष्णुता भारतीय संस्कृति में दिखाई देती है उसके कारण निष्चितरूप से हमारी भारतीय संस्कृति विषालता और विराटता को लिए है। इस कारण हमारी भारतीय संस्कृति में धार्मिक दृष्टि से किसी की संर्कीणता नहीं है। धर्म का एकमात्र लक्ष्य ही भौतिक उन्नति एवं आध्यात्मिक उन्नयन करना है।[6]

वेदों के आधार पर हमारा भारतीय धर्म वेदांग धर्म कहलाया। इस वेदाग धर्म ने हमारे व्यक्तिगत, व्यावहारिक और आध्यात्मिक जीवन को बहुत प्रभावित किया है। भारतीय विद्वानों की धारणा है कि वेदांग धर्म मे बहुदेवतावादी, न विष्व देवतावादी और तत्कालिक देवतावादी है। इसकी प्रकृति एकेष्वरवाद की है।[7] कहने का तात्पर्य यह है कि यह वेदांग धर्म सदा से ही भारतीय जनमानस में अपनी जड़ें जमाये हुए है। वैष्णव मत का उदय मौर्य काल से पहले हो चुका था। गुप्तकाल के शासकों ने इसे अधिक व्यापक बनाया। विष्णु को देवाद्विदेव मानने वाला सम्प्रदाय वैष्णव सम्प्रदाय कहा जाने लगा। अनेक धार्मिक विष्वासों और विविध विद्वानों के कारण वैष्णव मत खूब लोकप्रिय हुआ। इसकी लोकप्रियता का कारण हिन्दुओं द्वारा इसे आसानी से अपना लिया जाना है। मध्यकाल में अनेक धार्मिक सम्प्रदायों का उदय हुआ। जिसमें निर्गण, सगुण उपासना प्रमुख थी। तात्कालिक संतों ने मध्यकालीन धार्मिक परिस्थितियों में समन्वय एवं सद्भाव को स्थापित करके विचारणीय योगदान प्रस्तुत किया है। इन सन्तों की लोककल्याणकारी भावना का ही प्रमाण है कि आज शेखावाटी अंचल में राम भक्ति सम्प्रदाय का अच्छा प्रचार–प्रसार है। जगह–जगह मंदिर मठ बनाए हुए हैं। जिनमें राम भक्ति साधुओं का आना–जाना है। राम भक्ति शाखा के अन्तर्गत ही कुछ इस प्रकार के संत कवि हुए जिन्होने अपनी एक अलग भक्ति धारा प्रवाहित की और उन्होने समाज को बहुत कुछ दिया।

भक्ति का लक्ष्य भक्त के लिए मोक्ष प्राप्त करना है और वह जीवनभर इसी प्रयास में रहता है कि उसको मोक्ष प्राप्त हो। वैसे देखा जाये तो ईष्वर या उस परमतत्व में पुनःलीन हो जाना ही मोक्ष है। इसके लिए भक्त को उपासना, ध्यान, जप, तप, साधना, सेवा, पूजा तल्लीन रहना पड़ता है। परब्रह्म परमात्मा एकान्ता प्रीति करना ही उपासना है। उपासना का अर्थ है

भगवान के पास में आसन लगा कर बैठना।[8] सब प्राणियों को मोह के बन्धन से मुक्त करना ही मोक्ष कहलाता है। और वैष्णव कवियों ने इसी उद्देष्य को ध्यान मे रखाकर अपनी भक्ति भावना का परिचय दिया है।

गीता में भी ज्ञानयोग, कर्मयोग व भक्तियोग की चर्चा की गई है और भक्ति को ही सर्वश्रेष्ठ माना गया है भक्ति के स्थूल रूप से दो प्रकार हैं :– (1) सगुण भक्ति (2) निर्गुण भक्ति। सगुण का मतलब साकार और निर्गुण का मतलब निराकार। जब भक्ति सांसारिकता से पर हट कर भगवान में तन में होकर भगवान की भक्ति करता है तो वही भक्त कहलाता है।

2. राम नाम का महत्व

राम भक्ति सम्प्रदाय की सभी शाखायें अपना सम्बन्ध रामानन्द की षिष्य परम्परा से जोड़ती हैं। ऐसा माना जाता है कि रामानन्द के 500 से अधिक षिष्य थे। उनके अनेक षिष्यों में द्वादष प्रमुख षिष्यों को नाभादास ने अपने ग्रन्थ भक्तमाल में भी गिनाया है। रामानन्द पर तात्कालीन परिस्थितियों का गहरा प्रभाव पड़ा। जिसके कारण इनके दृष्टिकोण में उदारता आई। रामानन्द की रामभक्ति धारा, आगे चलकर दो भागों में विभक्त हो गई– निर्गुण रामभक्ति व सगुण रामभक्ति। निर्गुण रामभक्ति की बागडोर कबीर ने अपने हाथ मे शामिल किया तो सगुण रामभक्ति का प्रचार–प्रसार तुलसीदास ने किया और इसे घर–घर तक पंहुचा दिया। अपनी महान प्रतिभा और भक्ति के बल पर तुलसीदास ने जिस साहित्य का निर्माण किया, वह आज भी जनमानस का षिरोमणि बना हुआ है। तुलसी ने समन्वयक भावना से तत्कालीन परिस्थितियों में एक ऐसा समन्वयक प्रस्तुत किया, जिसका प्रभाव आज तक भारतीय समाज पर दिखाई देता है।

यहां राम और सीता के शाब्दिक अर्थ पर भी विचार कर लेना आवष्यक है। राम के दो रूप हैं। एक मर्यादा पुरूषोत्तम और दूसरा लीला पुरूषोत्तम राम और सीता का विचार करने पर महापुरूषो में माना है कि राम पुरूष और सीता प्रकृति है। संकेत की माधुर्य लीला प्रकृति पुरूष की नियत लीला है और इस प्रकार दोनों अभिन्न हैं। जिस प्रकार सूर्य और उसकी प्रवाह है।[9] राम शब्द रम् धातु से बना है। जिसका प्रयोग क्रीड़ा के अर्थ में होता है। रसिक राम भक्तों ने यह स्वीकार किया है कि राम के अलौकिक सौर्हाद में जीव मात्र को आह्लादित करने, रमाने की जो विलक्षण क्षमता है इसके कारण ही इनका नाम राम पड़ा। भक्त तुलसी के रामचरितमानस में ऐसे प्रसंग सर्वत्र दिखाई दे जायेंगे जहां राम के रूप माधुर्य की छटायें देखते ही बनती हैं। उनके रूप लावव्य से स्त्री पुरूष ही क्या, खग–भग, तृण–तरू सभी आप्लावित हैं।

सीता का शाब्दिक अर्थ है :– अपनी भाव भंगिमाओं तथा मधुर चेष्टाओं से (प्रियतम को) वष में करने वाली। सीतोपनिषद् में कहा गया है कि सीता शब्द में साकार विष्णु का, ईष्वर माया का, तकार मोक्षप्रद सत्य का तथा आकार अमृत का प्रतीक है। यह नाम अव्यक्त रूपिणी महामाया का व्यक्त विग्रह है। इस प्रकार राम सभी को रमाने की अद्भुत क्षमता रखते हैं और सीता त्रिर्वणात्मिका माया का स्वरुप हैं। प्रियतम को वंष में करने वाली है। जब महामाया आराधना से वंष में आ गयी फिर राम तो स्वतः ही अपने हैं।[10]

इस आधार पर बाद में भक्ति के पंचभावों में किसी एक का आषय लेकर राम और कृष्ण की उपासना करने वाले रसिक कहलाने लगे। अग्रदास जी ने राम भक्तों को पंचभावों का उपासक मान कर पाँच रसों के अनुकूल सेवाओं का विधान किया है और साहित्य के नवरसों को आदर देते हुए अपने इष्ट देव को चौदह रसों का आषय माना है। सूफी संतों की भांति संसार की सभी सुन्दर वस्तुओं में वे अपने प्रिय की छवि को निहारते है, मुग्ण होते है। इन सभी कृतियों के माध्यम से कर्ता

की याद आते ही विरह व्याकुल हो उठतें है। इस संप्रदाय के संत अपने संप्रदाय के साधकों से ही विषेष मेल–मिलाप रखते हैं, अन्य पंथ के साधकों से कोई प्रयोजन नही रखते है।

राम की छवि के माधुर्य का पान ही एक मात्र इनका उद्देष्य होता है। आदर्ष रसिकों का संसार से अधिक सम्बन्ध नहीं रहता वे राम को हृदय में रमाये हुये संसार रुपी शीत से बचनें के लिए एक मात्र गूदड़ी ही रखते है। तुलसी की माला गले में, मस्तक पर तिलक, दोनों भुजाओं में राममुख की छाप, कमर में लंगोटी, हाथ में कमंडल और देह पर एक पीत वस्त्र, बस यही बाना है।

3. राधा कृष्ण भक्ति शाखा

शेखावाटी अंचल में सगुण भक्ति साहित्य के अन्तर्गत राधा कृष्ण भक्ति शाखा भी प्रचारित दिखाई देती है। वैष्णव भक्तों ने जहाँ मोक्ष प्राप्ति के लिए भगवान राम की आराधना की, वही कृष्ण को भगवान अवतार मान कर उनकी भक्ति की यद्यपि भक्तिकाल में सूर जैसे महान कवि पैदा हुए उसके बाद परवर्ती युग में कृष्ण भक्ति धारा को भी अपना कर कई संतों ने इस प्रकार के पद्य लिखे हैं जिनके माध्यम से कृष्ण भक्ति की भावना साकार रुप में प्रकट हुई है। रामनाथ कविया ऐसे ही चारण कवि थे जिन्होंने द्रोपदी विनय नाम से काव्य लिखा जिसमें द्रोपदी की मार्मिक पुकार का चित्रण किया गया है और संकट की स्थिति में अपनी लाज को बचाने के लिए श्रीकृष्ण को पुकारा है। कवि की इस पुस्तक का करुण विनय और आत्म निवेदन की दृष्टि से अत्यंत महत्व है। कुछ लोगों ने इसे करुणा बावनी नाम भी दिया हैं, इसमें सती नारी के आक्रोष की अच्छी व्यंजना हुई है। इसमें नारी गौरव और अत्याचार के प्रति विद्रोह है। द्रोपदी विनय का एक–एक सोरठा उत्कृष्ट काव्य का रुपक है। जिसमें द्रोपदी ने चीर हरण के समय श्री कृष्ण को याद किया था।

प्रस्तुत काव्य लोक मानस में भी छाया हुआ है तथा जन मुख से भी काव्य सुनने को मिलता हैं। डाँ मनोहर शर्मा ने लिखा है कि रामनाथ कविया रस सिद्ध होकर जरा मरण के अर्थ से मुक्त जाते है। ऐसे ही प्रषस्त कवियों में एक रस सिद्ध रामनाथ कविया हैं।[11]

इस तरह शेखावाटी अंचल में राधा कृष्ण भक्ति शाखा के अन्तर्गत संतों और कवियों ने अनेक पद्यों की रचना की है।

(ख) उपास्य युगल की प्रेम लीलाएं

शेखावाटी अंचल के संतों ने कृष्ण भक्ति और राम भक्ति दोनो ही धाराओं में अपनी मधुर मनोभावना का परिचय दिया है। राम और सीता राधा और कृष्ण इन दोनों युगल अवतारी पुरुषों का जीवन चरित्र प्रेम से परिपूर्ण दिखाया गया है क्योंकि इनकी लीलाओं का वर्णन करते हुए इन संत कवियों ने प्रेम को प्रधानता दी है। वस्तुतः इन संतों का प्रेम गुण रहित है, कामना रहित है। सूक्ष्म से भी सूक्ष्म तर है और अनुभव रुप है। इस प्रेम को प्राप्त कर प्रेमी एक प्रेम को ही देखता है, प्रेम को ही सुनता है। प्रेम का ही वर्णन करता है और प्रेम का ही चिन्तन करता है।[12]

सगुण भक्त कवियों ने प्रेम की लीलाओं का चित्रण किया हैं। जिसके द्वारा उन्होंने उस परम परमेष्वर कें प्रति अपना सहज प्रेम प्रकट किया हैं। इस प्रेम के प्रेमी एवं प्रेम पात्र के बीच स्त्री पुरुष का दाम्पत्य प्रेम भाव प्रकट किया गया है। संत

साहित्य में आत्मा और परमात्मा के महामिलन को दाम्पत्य प्रेम भाव के द्वारा दिखलाया गया है तथा जीवात्मा को पत्नी और परमात्मा को पति मान कर आद्यात्मिक प्रेरणा द्वारा माधुर्य भाव का उत्कृष्ट परिपाक किया गया है। प्रिय मिलन के विषय में डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी ने ठीक लिखा है ''संत की परम साधना है भगवान के साथ लीला भक्तों में अपनी उपासना पद्धति के अनुसार इस लीला के रूप में भेद हो सकता है पर सब का लक्ष्य ये लीला ही है जो भक्त दास्य भाव से भजन करता है, वह भगवान की सता में विलय हो जाता है।[13]

इस प्रकार सभी संत कवियों ने अपने परमात्मा के साथ अपना सम्बन्ध जोड़ते हुए प्रिय भाव से वियोग का चित्रण किया हैं। जिसमें उनका कान्ता भाव रसमय सेवा के साथ प्रकट हुआ है।

(ग) मधुर रस की साधना

राम भक्ति सम्प्रदाय की विभिन्न शाखाओं में मधुर उपासना का प्रभाव दिखाई देता है। यहाँ प्रेम तत्व को प्रधानता दी गई है। प्रेम मधुरता भाव है। इसलिए परमात्मा एवं भक्त में मधुर भाव है जिसके कारण मार्धुय भाव की उत्पत्ति हुई है। भक्त का मन परमतत्व के प्रति निरन्तर मग्न रहता है और वहाँ परमतत्व को उसी रूप में प्राप्त करना चाहता है जिसमें कोई स्त्री अपने प्रिय को प्राप्त करने की कोषिष करती है। रामभक्ति साहित्य में स्त्री पुरूष का दाम्पत्य सम्बन्ध दिखाने वाले सबसे पहले आचार्य अग्रदास जी महाराज थे। उन्होंने 'ध्यान मंजरी' नामक ग्रन्थ में अपनी रसिक साधना का एक व्यावहारिक रूप प्रस्तुत किया है। शताब्दियों से रहस्य बने भावों को जन–जन के सामने प्रस्तुत किया है :–

श्री गुरू–संत–अनुग्रह ते अस गोपुरवासी।
श्रसिकजनन हित करन रहसि यह ताहि प्रकासी।।[14]

इतिहास में 16 वीं से उन्नीसवीं शती को एक अति महत्वपूर्ण काल माना गया है। अग्रअली, बालअली, मधुराचार्य तथा रामसखे जैसे तत्त्व ज्ञानियों ने अपने पूर्वाचायों द्वारा प्रवर्तित एवं पोषित 'रहस्य–साधना' को आगे पूर्ण विकास की स्थिति तक पहुंचा दिया। इन्होंने सांप्रदायिक साधना को सहज, सुगम, सुबोध एवं सुरम्य बनाया। इससे सहस्त्रों जिज्ञासु साधकों का भटकाव समाप्त हुआ। वे इस रसात्मक राम भक्ति की ओर उमड़ पड़े।

संप्रदाय के पूर्वाचार्यो की भांति इस काल के रसिक भक्तों का आचार–विचार अत्यन्त सरल व पवित्र था। सांसारिक प्रपंचों से विरक्त होकर ये दंपति के दिव्य श्रृंगार में पूर्ण रस लेते थे। इसे भक्ति की रसभूमि का प्रसाद समझते थे। लौकिक क्रिया–कलापों की आराधना से अलौकिक तत्त्व को पाने का यह मार्ग था। इन संतों का अपना सारा समय आराध्य के नाम, रूप, लीला और धाम के चिंतन में व्यतीत होता था। साधारण दृष्टि से सांसारिक जीवन में सरसता के जितने उपकरण हो सकते हैं, इन भक्तों के साधनात्मक जीवन में वे सारे परिष्कृत एवं सूक्ष्म रूप में विद्यमान थे। उपास्य को अपने मन भावना रूप में पूजने की इन्हें स्वतंत्रता थी। आरंभ में अपने आराध्य से एक नाता जोड़ कर जीवन पर्यन्त उसका निर्वाह करना, इनकी साधना का मूल ध्येय था। इस प्रकार जीवन के सारे क्रिया–कलापों की भावनात्मक पूर्ति आराध्य के साथ पूरी होने से सांसारिक सम्बन्धों एवं विषयों से विरक्ति स्वतः हो जाती है। उस परम् सत्ता से सम्बन्ध जुड़ने पर लोक व्यवहार फीका लगना स्वाभाविक है। रसिकों की यह एकांत साधना कितनी व्यवस्थित, गंभीर व मनमोहक है कि इसका सम्यकदर्षन इसके सर्वांगीण चित्रण से ही स्पष्ट हो सकता है।

श्रीराम भक्ति साधना में रस की धारा का यद्यपि अधिक विकास नही हो पाया था, ऐसा लगभग सभी लोग मानकर चलते थे क्योंकि ये लीलाए पुरूषों में कम थी श्रीकृष्ण विषय में ही प्रसिद्व रही हैं लेकिन नवीनतम अनुसंधानों के आधार पर कहा जा सकता हैं कि श्रीरामभक्त क्षेत्र में भी रसिक साधना की धारा का पर्याप्त विकास मिलता हैं। इस सम्बन्ध में जो खोज हुई है उसके आधार पर कहा गया हैं कि इस सम्बन्ध में लगभग 1000 ग्रंथों का पता लगाया हैं।[15]

हमारे यहां प्राचीन काल से ही श्री राम की उपासना चली आ रही थी किन्तु इसका विषेष विकास 8 वीं शताब्दी के पश्चात हुआ षठकोप (नम्मालवार) से लेकर श्रीकृष्णदास पयहारी पर्यन्त श्री रामचन्द्र जी की उपासना के विषय में जिस साहित्य की रचना हुई, उसमें रसिक भावना की छाप स्पष्ट थी।[16] लेकिन यह रसिक भावना कई ग्रन्थों में इधर–उधर बिखरे रूप में थी अतः समस्त वाङ्मय के रूप में प्रकाषित नही हो पाई। आगे चलकर इन अंषो को सुसज्जित एवं सुसंगत रूप में प्रकाषित किया गया। ओर यह काम किया आचार्य अग्रदास महाराज ने । अतः हिन्दी साहित्य में रामभक्त के क्षेत्र में रसिक सम्प्रदाय के प्रर्वतक आचार्य अग्रदास माने जाते हैं[17] और आप शेखावाटी में रैवासापीठ के संस्थापक थे। रामभक्त के रसिक मधुरोपासकों में स्वामी अग्रदासजी का नाम अग्रगण्य हैं।

राम भक्ति का रसिक साधक सीता राम के युगल विलास का एक दासी रूप में दिखाई देता है। उसकी सुखानुभूति में व पुलकित रहता है। कभी वह सीता की सखी सेविका अंगजा के रूप में उनकी सेवा में तल्लीन रहता है तो राम–सीता के युगल रूप सौन्दर्य पर मुग्ध अलौकिक आनन्द में डूबा रहता है। इस तरह माधुर्य भाव की साधना ने राम भक्ति को एक नया रूप प्रदान किया है।

सन्दर्भ

1 वरदा अप्रैल 1982 अंक – 1 पृ. 42
2 वरदा अप्रैल 1982 अंक – 1 पृ. 52
3 वरदा अप्रैल 1982 अंक – 1 पृ. 53
4 हिन्दी साहित्य का इतिहास – रामचन्द्र शुक्ल पृ. 65
5 हिन्दी साहित्य युग और प्रवृतियां प्रो. षिवकुमार पृ. 194
6 रैवासा की माधुरोपसाना उपावसना (मनोहरसिंह राठौड़) पृ. 1
7 अग्रदेवाचार्य पीठ रैवासा लेखक रतन लाल मिश्रा पृ. 1
8 रैवासा की मार्धुय उपासना लेखक मनोहरसिंह राठौड़ पृ. 2
9 रैवासा की मार्धुय उपासना लेखक मनोहरसिंह राठौड़ पृ. 8
10 रैवासा की मार्धुय उपासना लेखक मनोहरसिंह राठौड़ पृ. 9
11 वरदा अप्रैल 1982 पृ. 93
12 हिन्दी संत साहित्य मार्धुय भाव डॉ. रामचरण शर्मा पृ. 58
13 हिन्दी संत साहित्य मार्धुय भाव डॉ. रामचरण शर्मा पृ. 58

14 ध्यान मंजरी पृ. 24

15 रामभक्ति में रसिक सम्प्रदायः डॉ. भगवती सिंह, पृ. 4

16 रामभक्ति में रसिक सम्प्रदायः डॉ. भगवती सिंह, पृ. 5

17 रामभक्ति में रसिक सम्प्रदायः डॉ. भगवती सिंह, पृ. 6